शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अगस्त 2014

सम्पादकीय

दुर्लभं भारते जन्म

विनोबा

कहा गया है दुर्लभं भारते जन्म। हमारा यह भारत देश परम पवित्र देश है, ऐसा हमारे पूर्वज कहा करते थे। हम भी यही कहते हैं कि यहां की मिट्टी के कण-कण में और यहां की हवा में अणु-परमाणु में कुछ अनिर्वचनीय चमत्कार भरा हुआ है, इसकी अनुभूति मुझे सदैव हुआ करती है। इस देश के चेहरों में मुझे जो सौंदर्य, पावत्र्य, माधुर्य और गांभीर्य देखने को मिलता है, उसे देखते रहने के लिए अगर मुझे अनेक जन्म लेने पड़ें, तो उसके लिए मैं तैयार हूं। तुकाराम का वचन थोड़ा बदल कर मैं कहता हूं - नहीं चाहिए मुक्ति, धन और संपत्ति। मुझे सदा भारतीयों का संग (मूल में सतसंग) दो। वैसे यह उद्‌गार अतिशयोक्तिपूर्ण है ही, लेकिन इसका कारण इस देश में मनुष्य ने सर्वप्रथम मानवधर्म सीखा और उसे अहिंसा के तरीके से जीने का पता चला। मानव पहले शिकार करता था और जैसे दूसरे प्राणी रहते थे वैसे रहता था। उसके लिए हिंसा अनिवार्य थी, जैसे जंगल के दूसरे प्राणियों के लिए अनिवार्य होती है। उससे छुटकारा पाने की तरकीब मानव को हिंदुस्तान में ही सबसे पहले सूझी।

यह तरकीब थी, खेती करना। आज हमें यह मालूम नहीं कि खेती में इतना बड़ा आध्यात्मिक रहस्य छिपा है। किंतु दो-चार दाने बोकर उसमें से सौ दाने पैदा करना और फिर अपनी इच्छा के अनुकूल जीवन निर्वाह करना यह एक विशेष ही वस्तु उस समय मानव को सूझी। तभी से हिंदुस्तान के लोगों को अहिंसक जीवन का मार्गदर्शन मिला। फिर मांसाहार के त्याग का आंदोलन चला और जैनियों ने उसमें पूर्णता प्राप्त की। बुद्ध भगवान ने उसके साथ अहिंसा और करुणा जोड़ दी और वैदिकों ने खेती की उपासना। इस तरह एक-एक कदम आगे बढ़ते-बढ़ते हिंदुस्तान का सर्वसाधारण समाज अहिंसा की खोज में आगे बढ़ता गय।

खेती से अहिंसा की शुरुआत होती है। उसके बाद गोदुग्ध की महिमा, भगवान कृष्ण की गोसेवा, गृत्समद की कपास की खोज, ज्ञानार्जन के लिए समर्पण और दारिद्र्य का वरण करने वाले सेवक वर्ग की स्थापना, शौर्य-धैर्य-प्रजारक्षण का क्षात्रधर्म, शिक्षा पर राज्यसत्ता का अनियंत्रण, आश्रम व्यवस्था, यतियों के हाथ में दंड, ब्रह्मविरोधी तत्वों को पचाने वाला भक्तिमार्ग, अहिंसा के लिए यज्ञ और अहिंसा के लिए यज्ञ-निषेध, महावीर और बुद्ध के समाजसुधार, ग्रामपंचायतें, बाहर की दुनिया को मुक्त प्रवेष, बाहर की दुनिया पर अनाक्रमण - एक नहीं, दो नहीं, अनगिनत चैतन्य लहरें! और इन सबका फलित स्वराज्य-प्राप्ति के नये मार्ग की उपलब्धि, जिसके लिए वह वैदिक ऋषि यतेमहि स्वराज्ये कहते हुए व्याकुल हो उठा था।

वेदों में बहुत आदर के साथ वर्णन आता है कि देव आये, हाथ में परशु लिया और जंगल काटकर खेती के लिए जमीन बनायी। वेद में कृषि और गाय-बैलों के लिए इतना निस्सीम आदर दिखायी देता है कि उसकी तुलना में दुनिया की किसी भी दूसरी भाषा में वैसा वर्णन नहीं मिलता। हमारे सर्वोत्तम ऋषि का नाम 'ऋषभ' रखा गया, जिसके मानी है उत्तम बैल। हमारे महान बुद्ध भगवान का नाम गौतम यानी उत्तम बैल। इस तरह अपने लड़के को बैल की उपाधि देने में यहां के लोगों को इज्जत मालूम होती थी, क्योंकि उसी बैल की मदद से हमें अहिंसक जीवन का दर्षन हुआ था। हमारी सभ्यता में गाय-बैल के लिए बहुत आदर है। 'गौ' के कई अर्थ हैं। वाणी, पृथ्वी, बुद्धि आदि। इसका कारण यही है कि शिकारी

जीवन से मुक्ति पाने में सहायक खेती की खोज यहीं हिंदुस्तान में हुई। इसलिए इस भूमि को पुण्यभूमि और इसकी मिट्टी में जंतु का जन्म पाना भी पवित्र माना गया है।

तुलसीदास जी ने भी कहा - भलि भारत भूमि, भले कुल जन्म। भारत में जानवरों का जन्म भी दुर्लभ माना गया, क्योंकि यहां की चप्पा-चप्पा भूमि पर संतों के पांव पड़े हैं। भारतभूमि में कन्याकुमारी से कैलास तक असंख्य सत्पुरुषों ने सतत परिभ्रमण किया। उनके चरणें का स्पर्ष यहां की धूलि के कण-कण को हुआ है, उस धूलि में पड़े कीड़े को भी उनका स्पर्ष हुआ, इसलिए वे भी भाग्यवान हैं। इतनी भव्य कल्पना यह ऋषि कर रहा है। वह धन्यता-ही-धन्यता महससूस करता है। धन्य है यह भारत भूमि, धन्य है यह मानव कुल।

पांच सौ साल पहले गुजरात के कवि नरसिंह मेहता ने लिखा था कि भरत खंड भूतळमां जन्मी जेणे गोविंदना गुण गाया रे -जिसने भरतभूमि में जन्म पाया औ भगवान का गुण गाया वह धन्य है। यही बात असम के शंकरदेव और माधवदेव ने कही है। न नरसिंह मेहता ने गुजरात की महिमा गायी, न षंकरदेव ने असम की महिमा गायी। शंकरदेव उसी शतक में हुए, जिस शतक में नरसिंह मेहता हुए। एक-दूसरे की भाषा तो वे जानते ही नहीं थे, वे एक-दूसरे को भी नहीं जानते थे, लेकिन भारत हमारी पुण्यभूमि है और हमने उसमें जन्म पाया है, इसलिए हम धन्य हैं, ऐसा वे दोनों महसूस करते थे और ऐसा ही लिखते थे। रामायण हिमालय से कन्याकुमारी तक संबंध जोड़ती है ओर महाभारत द्वारका से सदिया असम तक। इस तरह भारत की पूर्व-पश्चिम और उत्तर-दक्षिण की एकता सर्वमान्य है।

विश्वमानुषता की ओर

वेद 'विश्वमानुषता' की बात करता है। पृथ्वी पर के सब मनुष्यों का एक परिवार है, यह कहते हुए कहा - वसुधैव कुटुंबकम - कुटुंब नहीं, कुटुंबकम् कहा, मतलब छोटा कुटुंब। पृथ्वी के उपरांत हो ब्रह्मांड है, वह सारा मिलकर पूरा कुटुंब होगा, पृथ्वी छोटा कुटुंब है। इस प्रकार की एक व्यापक दृष्टि हमारे पूर्वजों ने हमें दी।

ज्ञानदेव ने 'ज्ञानेश्वरी' लिखी मराठी में और मराठी-भाषियों के लिए, पर समर्पण में लिखा - आतां विश्वात्मकें देवें। येणें वाग्यज्ञे तोषावें। तोषनि मज द्यावें। पसायदान हें। विश्वरूप देव संतुष्ट हो, यही प्रसाद मुझे मिले।

लोकमान्य तिलक ने भी 'गीता-रहस्य' लिखा और समर्पित किया - श्रीशाय जनतात्मने - जनतारूपी जनार्दन को समर्पण किया। तुकाराम बेचारा देहू में रहने वाला, अधिक-से-अधिक उधर पंढरपुर और इधर नासिक तक कभी गया होगा। लेकिन भावना रखता है कि - आमचा स्वदेश। भुवनत्रयामध्यें वास। हमारा घर यह सारा त्रिभुवन है। जिस समाज को संतों ने इतनी व्यापक दृष्टि दी, वह कभी संकुचित नहीं रह सकता।

सर्वसमावेशक जीवनदृष्टि

इस देश ने कभी एक्स्पेन्शनिस्ट (विस्तारवादी) वृत्ति नहीं रखी। उलटे दुनिया के लोगों को यहां आने दिया। सर्व-रक्षण की उसकी एक पद्धति है। गीता ने सिखाया - परस्पर भावयन्तः - यह दृष्टि मनुष्यों के साथ, पशुओं के साथ और सृष्टि के साथ रही।

मिस्टर एंड्रयूज कहते थे कि भारत में गिलहरी जिस तरह मनुष्य के पास आती है, वैसी पश्चिम के देशों में नहीं आती, वहां मनुष्य से दूर-दूर भागती है। भारत में तो नाग की भी पूजा होती है। भारत के महासागर में दुनियाभर की संस्कार-नदियां मिलती हैं। इसलिए भारत में प्राचीनतम ग्रंथ - ऋग्वेद में विश्वमानुष: शब्द आया। यह शब्द भारतीय संस्कृति को इसलिए सूझा कि इस संस्कृति में निरंतर खयाल किया गया है कि हम कोई संकुचित नहीं हैं, परम व्यापक हैं। इसी को 'दर्शन' कहते हैं। उसके अनुसार आचरण और जीवन बनाने में चाहे समय लगे, चाहे युग बीत जाये, लेकिन दर्शन तो दर्शन ही है।